

## संपादकीय

## एसआईआर: आयोग बैकफुट पर भारत

*निर्वाचन आयोग दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र की नाँव है। उसकी हर प्रक्रिया पर करोड़ों आँखें टिकी रहती हैं। जब वह विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआईआर जैसी प्रक्रिया शुरू करता है, तो उसका उद्देश्य मतदाता सूची को शुद्ध करना होता है। लेकिन पिछले तीस दिनों में पाँच बड़े आदेशों में बदलाव ने गंभीर सवाल खड़े किए हैं। क्या आयोग किसी दबाव में है या जमीन पर आ रही कठिनाइयों को देखकर अपनी प्रक्रिया में सुधार कर रहा है? इस घटनाक्रम के लोकतांत्रिक संदेश को समझना जरूरी है। एसआईआर की शुरूआत पश्चिम बंगाल से हुई और वहीं से विवाद भी शुरू हुआ। छूटे हुए पात्र मतदाताओं को जोड़ने के लिए विशेष शिविर लगाए गए और चौबीस जिलों में अभियान शुरू किया गया। इसी बीच फार्म छह के साथ अतिरिक्त घोषणा-पत्र जोड़ने का आदेश आया, जिसमें पुरानी मतदाता सूची और परिवार के सदस्यों के नाम से संबंधित जानकारी मांगी गई। इस पर सर्वोच्च न्यायालय को स्पष्ट करना पड़ा कि उसने फार्म छह के संशोधित रूप को मंजूरी नहीं दी है। फार्म सात का उपयोग किसी मतदाता का नाम हटाने या उस पर आपत्ति दर्ज करने के लिए होता है। इसके दुरुपयोग की शिकायतों के बीच एक ही व्यक्ति द्वारा सैंकड़ों नाम हटाने के आवेदन किए जा रहे थे। आयोग ने सीमा तय की कि एसआईआर के दौरान एक मतदाता अधिकतम दस फार्म सात जमा कर सकेगा। सामान्य दिनों में यह सीमा सप्ताह रહેगी। यह सुधार जरूरी था, क्योंकि लोकतंत्र में नाम जोड़ना जितना महत्वपूर्ण है, उतना ही जरूरी पात्र मतदाताओं के नाम सुरक्षित रखना है।*

*एक अन्य महत्वपूर्ण बदलाव नोटिस पाने वाले मतदाताओं की सुनवाई से जुड़ा है। पहले नोटिस मिलने पर मतदाता को स्वयं कार्यालय पहुंचना पड़ता था। बुजुर्गों, महिलाओं और रोज कमाकर खाने वाले लोगों के लिए यह कठिन था। अब बृथ स्तरीय अधिकारी यानी बीएलओ घर जाकर दस्तावेज जुटाएंगे और उन्हें निर्वाचन आयोग के पोर्टल पर अपलोड करेंगे। यह बदलाव जमीनी कठिनाइयों को समझने का संकेत है।*

*तीस दिनों में पाँच आदेश बदलना प्रशासनिक कमजोरी नहीं, संवेदनशीलता का प्रमाण भी हो सकता है। आयोग ने माना है कि पात्र मतदाता सूची से बाहर नहीं रहने चाहिए। लेकिन जब कोई संस्था बार-बार अपने आदेश बदलती है, तो जनता में भ्रम पैदा होता है। विपक्ष प्रक्रिया की तैयारी पर सवाल उठता है और सत्तापक्ष इसे विपक्ष के दबाव में झुकना बताता है। दोनों ही स्थितियां आयोग की निष्पक्ष छवि के लिए ठीक नहीं हैं।*

*फार्म छह के साथ अतिरिक्त घोषणा-पत्र का विवाद सबसे बड़ा सबक है। आयोग ने पहले अतिरिक्त जानकारी मांगी और विवाद होने पर उसे वापस लेना पड़ा। इससे सवाल उठता है कि क्या नीति बनाने से पहले जमीनी परीक्षण किया गया था? नई जानकारी मांगने से पहले यह सोचना जरूरी है कि क्या वह पहले से अन्य दस्तावेजों में उपलब्ध है और क्या गरीब मतदाता के लिए अपने दादा के जन्म का प्रमाण देना संभव है।*

*हमारा अग्रह है कि आयोग बैकफुट पर नहीं, फ्रंटफुट पर दिखे। एसआईआर जैसी बड़ी प्रक्रिया से पहले मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों की बैठक केवल औपचारिकता न हो। बीएलओ द्वारा घर जाकर दस्तावेज जुटाने की पहल स्थायी बनाई जाए। फार्म छह और फार्म सात की प्रक्रिया पारदर्शी हो, ताकि किसी का नाम बिना सुनवाई के न हटे। मतदाता सूची केवल कागज नहीं, लोकतंत्र का आधार है। एक भी पात्र व्यक्ति का नाम छूटना या अपात्र व्यक्ति का नाम जुड़ना, दोनों लोकतंत्र के लिए खतरा हैं। आयोग ने तीस दिनों में पाँच बार आदेश बदले हैं। यह प्रमाण है कि वह सुन रहा है। अब जरूरत है कि वह सुनने के साथ दूरदर्शिता भी दिखाए, ताकि उसे अपने आदेश बार-बार न बदलने पड़ें।*

### आजकल

## महंगाई पर लगाम जरूरी, वैश्विक संकट की घरेलू चुनौती

**थोक** महंगाई का आंकड़ा जब तीस महीने के शिखर पर पहुंचता है, तो वह केवल सांख्यिकी नहीं रह जाता, बल्कि बाजार के मनोविज्ञान को भी बदल देता है। वैश्विक स्तर पर ऊर्जा बाजार की अस्थिरता और आपूर्ति शृंखला में बाधाओं का सीधा असर भारतीय थोक बाजार पर दिख रहा है। थोक महंगाई बढ़ना इस बात का संकेत है कि उत्पादन की लागत बढ़ रही है और इसका असर अंततः खुदरा बाजार तक पहुंचेगा।

इंधन, बिजली और थोक महंगाई का गहरा संबंध है। जब बिजली और इंधन महंगे होते हैं, तो केवल घरेलू बिल नहीं बढ़ते, बल्कि कारखानों में बनने वाला हर सामान महंगा हो जाता है। परिवहन का खर्च बढ़ता है, कोल्ड स्टोरेज महंगा होता है और इसका असर खाद्य उत्पादों से लेकर औद्योगिक वस्तुओं तक दिखाई देता है। यही कारण है कि विभिन्न श्रेणियों में कीमतों का दबाव बढ़ रहा है।

शेयर बाजार भी इस स्थिति से प्रभावित होता है। निवेशकों को आशंका है कि कंपनियों की उत्पादन लागत बढ़ने के बावजूद वे पूरा बोझ उपभोक्ताओं पर नहीं डाल पाएंगी। इससे मुनाफा घट सकता है और बिकवाली बढ़ सकती है। वैश्विक उथल-पुथल के बीच विदेशी निवेशकों की निकासी रुपये पर दबाव और बाजार में अस्थिरता बढ़ा सकती है।

केंद्र सरकार के सामने चुनौती महंगाई पर नियंत्रण के साथ आर्थिक गतिविधियों को गति देने की भी है। ऊर्जा सुरक्षा के लिए वैकल्पिक स्रोतों और रणनीतिक भंडार पर काम करना होगा। खाद्य आपूर्ति बेहतर बनाने, किसानों की मंडियों तक सीधी पहुंच सुनिश्चित करने और जमाखोरी पर सख्त नियंत्रण से कीमतों को काबू में रखने में मदद मिल सकती है। केवल ब्याज दरें बढ़ाना पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि उत्पादन बढ़ाने और लागत घटाने पर भी ध्यान देना होगा।

महंगाई का यह दौर वैश्विक कारणों से शुरू हुआ है, लेकिन इसका समाधान घरेलू स्तर पर भी खोजना होगा। यदि थोक स्तर पर कीमतों का दबाव नहीं थमा, तो उसका असर खुदरा बाजार और आम आदमी की र्खोई तक पहुंचेगा। सरकार को आपूर्ति बढ़ाने और उत्पादन लागत घटाने के लिए ठोस कदम उठाने होंगे। तभी बाजार में स्थिरता और उपभोक्ताओं को राहत मिल सकेगी।

## लद्दाख के भूगोल को बार-बार बदलने की कोशिश केवल सीमा का विवाद नहीं, बल्कि एक बड़ी अंतरराष्ट्रीय रणनीति का हिस्सा है। दुनिया में जब कोई ताकत सीधे युद्ध नहीं लड़ सकती, तो वह नक्शे के जरिए युद्ध लड़ती है। नाम बदलती है, मानचित्र में रेखाएं बदलती हैं और धीरे-धीरे दूसरे देश की जमीन पर अपना मनोवैज्ञानिक अधिकार जताती है। लद्दाख में जो हो रहा है, वह इसी रणनीति का ताजा उदाहरण है।

एक विदेशी ताकत लंबे समय से लद्दाख को विवादित क्षेत्र के रूप में दुनिया के सामने पेश करने की कोशिश कर रही है। उसका तरीका बहुत सोचा-समझा है। पहले वह अपने सरकारी दस्तावेजों में लद्दाख के कुछ रणनीतिक स्थानों के नए नाम जारी करती है, फिर उन नामों को अपने मानचित्रों में दिखाती है और उसके बाद अंतरराष्ट्रीय मीडिया में यह प्रचार करती है कि यह क्षेत्र विवादित है।

इसका उद्देश्य दुनिया में यह धारणा बनाना है कि लद्दाख भारत का अभिन्न हिस्सा नहीं, बल्कि ऐसा क्षेत्र है, जिस पर दो देशों का दावा है। यह रणनीति केवल लद्दाख तक सीमित नहीं

### कर्नाटक

की राजनीति में फिर वही पुरानी कहानी लौट आई है, जहां द्रुमन बाहर नहीं, बल्कि भीतर बैठा है। केमरा छिपा है और हर बात रिकॉर्ड हो रही है। इस बार स्टिंग की आंधी ने सत्ता के गलियारों को हिला दिया है। आरोप है कि अपने ही लोग अपने ही नेताओं का वीडियो बना रहे हैं और उसे हथियार की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं। यह लड़ाई अब विचारधारा की नहीं, बल्कि अस्तित्व की बन गई है।

स्टिंग का खेल समझना जरूरी है। यह केवल एक वीडियो नहीं, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक युद्ध है। जैसे ही कोई कथित वीडियो सामने आता है, जनता सच जाने बिना ही फैसला सुना देती है। अदालत का फैसला तो वर्षों बाद आता है, लेकिन राजनीति में वीडियो का फैसला कुछ घंटों में हो जाता है।

कर्नाटक में एक पूर्व मुख्यमंत्री के खिलाफ ऐसा ही कथित वीडियो प्रसारित करने की कोशिश हुई है, जिसके बाद उन्होंने अदालत की शरण ली और अदालत ने उस विवादित सामग्री के प्रचार पर रोक लगा दी। साथ ही पुलिस में शिकायत भी दर्ज करवाई गई है। लेकिन सवाल यह है कि यह वीडियो बनाया किसने?

एक करीबी विधायक का दावा है कि इसके पीछे वही लोग हैं, जो पहले एक पूर्व मंत्री के सीडी कांड के पीछे थे। उस समय एक मंत्री को इस्तीफा देना पड़ा था। अब फिर वही तरीका अपनाया जा रहा है। इसका मतलब है कि स्टिंग एक आदत बन चुका है।

कर्नाटक की राजनीति में सत्ता के कई दावेदार हैं। एक कुर्सी और कई दावेदार। जब बाहर से लड़ना मुश्किल होता है, तो भीतर से ही वार किया जाता है। इसका सबसे आसान तरीका है, नैतिकता के नाम पर हमला करो, वीडियो लाओ और कहो कि देखो, यह नेता नैतिक नहीं है। फिर उसी बहाने इस्तीफा मांगो। यह तरीका पुराना है, लेकिन कारगर है, क्योंकि इसमें

## फार्म छह के बाद घोषणा-पत्र नहीं, फिर भी दुरुपयोग कैसे रुकेगा

### निर्वाचन आयोग के स्पष्टीकरण का संदर्भ और उसका अर्थ

**मुख्य** निर्वाचन पदाधिकारी संजीव कुमार झा की अध्यक्षता में हुई मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों की बैठक में सबसे महत्वपूर्ण स्पष्टीकरण फार्म छह को लेकर दिया गया। बताया गया कि फार्म छह जमा करने के बाद अलग से घोषणा-पत्र प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है। यह स्पष्टीकरण इसलिए जरूरी हो गया था, क्योंकि जमीनी स्तर पर बृथ लेवल अधिकारियों से लेकर मतदाताओं तक में यह भ्रम फैल गया था कि फार्म छह के साथ अलग से एक शपथ-पत्र भी देना होगा।

आयोग ने स्पष्ट किया कि फार्म छह स्वयं में ही एक घोषित प्राकूप है। उसमें आवेदक अपनी आयु, नागरिकता और निवास की घोषणा करता है तथा निर्धारित दस्तावेज संलग्न करता है। इसलिए अलग से घोषणा-पत्र मांगना दोहराव और अनावश्यक बोझ है। इस स्पष्टीकरण का सीधा संबंध अभियान की सफलता से है, क्योंकि प्रदेश के सभी जिलों में छूटे हुए और पहली बार मतदाता बनने वाले युवाओं को जोड़ने के लिए विशेष अभियान चल रहा है।

इस विषय का दूसरा पक्ष अधिक गंभीर है। यदि घोषणा-पत्र की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई, तो क्या अपात्र लोग इस छूट का फायदा उठा लेंगे? यह आशंका राजनीतिक दलों ने भी बैठक में उठाई। घोषणा-पत्र एक स्वघोषित दस्तावेज था, जिसमें व्यक्ति स्वयं लिखकर देता था कि वह भारत का नागरिक है और उसकी आयु अठारह वर्ष पूरी हो चुकी है। इस स्वघोषणा की कानूनी वैधता तो थी, लेकिन व्यावहारिक सत्यापन की क्षमता बहुत कम थी, क्योंकि कोई भी व्यक्ति कुछ भी लिखकर दे सकता था।

अब व्यवस्था यह है कि स्वघोषणा के स्थान पर दस्तावेज आधारित सत्यापन को मजबूत किया गया है। फार्म छह के साथ आयु, निवास और पहचान के प्रमाण निर्धारित नियमों के अनुसार देना अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि छूट नहीं दी गई, बल्कि प्रक्रिया में बदलाव किया गया है। पहले कागज पर लिखी बात को सच माना जाता था, अब दस्तावेजों के माध्यम से उसका सत्यापन किया जाएगा। यह व्यवस्था अधिक पारदर्शी हो सकती है।

सत्यापन तंत्र का मूल प्रश्न यह नहीं है कि घोषणा-पत्र लिया जाए या नहीं, बल्कि यह है कि सत्यापन कौन करेगा और कैसे करेगा। यदि कोई व्यक्ति गलत दस्तावेज लगाकर मतदाता बनना चाहे, तो उस कदम के लिए घोषणा-पत्र ही विषय का दूसरा पक्ष अधिक गंभीर है। यह विषय का दूसरा पक्ष अधिक गंभीर है। यदि घोषणा-पत्र की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई, तो क्या अपात्र लोग इस छूट का फायदा उठा लेंगे? यह आशंका राजनीतिक दलों ने भी बैठक में उठाई। घोषणा-पत्र एक स्वघोषित दस्तावेज था, जिसमें व्यक्ति स्वयं लिखकर देता था कि वह भारत का नागरिक है और उसकी आयु अठारह वर्ष पूरी हो चुकी है। इस स्वघोषणा की कानूनी वैधता तो थी, लेकिन व्यावहारिक सत्यापन की क्षमता बहुत कम थी, क्योंकि कोई भी व्यक्ति कुछ भी लिखकर दे सकता था। अब व्यवस्था यह है कि स्वघोषणा के स्थान पर दस्तावेज आधारित सत्यापन को मजबूत किया गया है। फार्म छह के साथ आयु, निवास और पहचान के प्रमाण निर्धारित नियमों के अनुसार देना अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि छूट नहीं दी गई, बल्कि प्रक्रिया में बदलाव किया गया है। पहले कागज पर लिखी बात को सच माना जाता था, अब दस्तावेजों के माध्यम से उसका सत्यापन किया जाएगा। यह व्यवस्था अधिक पारदर्शी हो सकती है।

सत्यापन तंत्र का मूल प्रश्न यह नहीं है कि घोषणा-पत्र लिया जाए या नहीं, बल्कि यह है कि सत्यापन कौन करेगा और कैसे करेगा। यदि कोई व्यक्ति गलत दस्तावेज लगाकर मतदाता बनना चाहे, तो उस कदम के लिए घोषणा-पत्र ही विषय का दूसरा पक्ष अधिक गंभीर है। यह विषय का दूसरा पक्ष अधिक गंभीर है। यदि घोषणा-पत्र की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई, तो क्या अपात्र लोग इस छूट का फायदा उठा लेंगे? यह आशंका राजनीतिक दलों ने भी बैठक में उठाई। घोषणा-पत्र एक स्वघोषित दस्तावेज था, जिसमें व्यक्ति स्वयं लिखकर देता था कि वह भारत का नागरिक है और उसकी आयु अठारह वर्ष पूरी हो चुकी है। इस स्वघोषणा की कानूनी वैधता तो थी, लेकिन व्यावहारिक सत्यापन की क्षमता बहुत कम थी, क्योंकि कोई भी व्यक्ति कुछ भी लिखकर दे सकता था। अब व्यवस्था यह है कि स्वघोषणा के स्थान पर दस्तावेज आधारित सत्यापन को मजबूत किया गया है। फार्म छह के साथ आयु, निवास और पहचान के प्रमाण निर्धारित नियमों के अनुसार देना अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि छूट नहीं दी गई, बल्कि प्रक्रिया में बदलाव किया गया है। पहले कागज पर लिखी बात को सच माना जाता था, अब दस्तावेजों के माध्यम से उसका सत्यापन किया जाएगा। यह व्यवस्था अधिक पारदर्शी हो सकती है।

आज की दुनिया में युद्ध कई स्तरों पर लड़ा जाता है। पहला जमीन पर, दूसरा मीडिया में और तीसरा नक्शे पर। नक्शे का युद्ध सबसे खतरनाक है, क्योंकि वह बिना गोली चलाए

## नईदुनिया

## कर्नाटक की सियासत में छाया स्टिंग का साया

### अपनों की जासूसी और भरोसे का कटल



विरोधी दल को कुछ करने की जरूरत नहीं पड़ती। सत्तारूढ़ दल खुद ही अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार लेता है।

एक विधायक ने तो खुलकर कहा है कि जब वह खुद मंत्रिमंडल में था, तब भी उसका स्टिंग करने की कोशिश हुई थी। इससे पता चलता है कि यह लड़ाई सत्ता के लिए ही नहीं, बल्कि वर्चस्व के लिए भी है।

इसी बीच सियासी पारा तब और चढ़ गया, जब विपक्षी दल के प्रदेश अध्यक्ष ने दावा किया कि चुनाव आते ही सत्तारूढ़ दल के पच्चीस विधायक, जिनमें कैबिनेट मंत्री भी शामिल हैं, उनके साथ आ जाएंगे। यह बयान सुनने में फिल्मी लगता है, लेकिन कर्नाटक में ऐसा पहले भी हो चुका है। कुछ साल पहले सत्रह विधायकों के इस्तीफे ने पूरी सरकार गिरा दी थी। इसलिए पच्चीस का आंकड़ा लोगों को

## अपनों की जासूसी और भरोसे का कटल

चौकाता नहीं है। इस दावे के पीछे दो रणनीतियां हैं। पहली, सत्तारूढ़ दल में डर पैदा करना। जब किसी विधायक को लगेगा कि उसके ही साथी उसकी जासूसी कर रहे हैं, तो वह असुरक्षित महसूस करेगा और विकल्प तलाशने लगेगा। दूसरी, जनता में यह संदेश देना कि सत्तारूढ़ दल में सब कुछ ठीक नहीं है। मुख्यमंत्री ने इस पर पलटवार करते हुए कहा है कि अगर इतना ही भरोसा है, तो उन नेताओं को अभी अपनी पार्टी में शामिल कर लेना चाहिए। चुनाव का इंतजार क्यों? यह बयान बताता है कि सत्ता पक्ष इस दावे को चुनौती के रूप में ले रहा है। इस पूरे घटनाक्रम में अब दो नए मोड़ आ गए हैं। पहला अदालत का और दूसरा जांच एजेंसी का। अदालत ने एक नेता की याचिका पर विवादित

समय की सबसे बड़ी सच्चाई यह है कि घर छोटे होते जा रहे हैं और दूरियां बढ़ती जा रही हैं। पहले एक ही आंगन में तीन पीढ़ियां रहती थीं। आज एक ही शहर में माता-पिता और बच्चे अलग-अलग फ्लैटों में रहते हैं और कई बार बच्चे देश के दूसरे कोने में या विदेश चले जाते हैं। पढ़ाई और नौकरी ने परिवार की पुरानी संरचना को पूरी तरह बदल दिया है। इसी बदलाव ने एक नई सामाजिक चुनौती को जन्म दिया है, वह है बुजुर्ग माता-पिता, दादा-दादी और नाना-नानी की देखभाल।

## उम्र के आखिरी पड़ाव में अकेलापन

### केरलम में बुजुर्गों की सुरक्षा के लिए व्यापक विधेयक लाने की पहल

बदलते समय की सबसे बड़ी सच्चाई यह है कि घर छोटे होते जा रहे हैं और दूरियां बढ़ती जा रही हैं। पहले एक ही आंगन में तीन पीढ़ियां रहती थीं। आज एक ही शहर में माता-पिता और बच्चे अलग-अलग फ्लैटों में रहते हैं और कई बार बच्चे देश के दूसरे कोने में या विदेश चले जाते हैं। पढ़ाई और नौकरी ने परिवार की पुरानी संरचना को पूरी तरह बदल दिया है। इसी बदलाव ने एक नई सामाजिक चुनौती को जन्म दिया है, वह है बुजुर्ग माता-पिता, दादा-दादी और नाना-नानी की देखभाल।

हाल ही में केरलम में बुजुर्गों की सुरक्षा के लिए एक व्यापक विधेयक लाने की पहल हुई है। इसके पीछे उद्देश्य बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार, उनकी संपत्ति पर अवैध कब्जे और देखभाल के नाम पर हो रहे शोषण को रोकना है। यह सोच केवल एक राज्य तक सीमित नहीं रह सकती, क्योंकि समस्या पूरे देश में एक जैसी है।

केरलम में साक्षरता अधिक है और पलायन भी अधिक है, इसलिए वहां यह समस्या पहले दिखाई दी। लेकिन पंजाब के गांवों में भी यही दृश्य है, जहां बच्चे विदेश चले गए हैं और पीछे बुजुर्ग अकेले रह गए हैं। कर्नाटक और महाराष्ट्र के सूचना प्रौद्योगिकी वाले शहरों में काम करने वाले युवाओं के माता-पिता उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और ओडिशा के छोटे कस्बों में अकेले जीवन जी रहे हैं। यह अब राष्ट्रीय चिंता का विषय बन चुका है।

यह समझना जरूरी है कि बच्चों का पढ़कर बाहर नौकरी करने जाना कोई अपराध नहीं है। यह प्रगति है और हर माता-पिता चाहता है कि उसका बच्चा आगे बढ़े। लेकिन सवाल यह है कि जब बच्चे आगे बढ़ जाते हैं, तो पीछे रह गए बुजुर्गों का क्या होता है? अस्सी साल की उम्र में दवा लाने वाला कोई चाहिए होता है। रात में तबीयत खराब होने पर अस्पताल ले जाने वाला और दिनभर बात करने वाला कोई चाहिए होता है। वीडियो कॉल इस कमी को पूरा नहीं कर सकता। इससे भावनात्मक दूरी कुछ कम हो सकती है, लेकिन शारीरिक देखभाल की कमी पूरी नहीं होती।

यही कारण है कि आज वृद्धाश्रमों की संख्या बढ़ रही है और कई जगह देखभाल के नाम पर चल रहे केंद्रों में भी लापरवाही तथा शोषण की खबरें आती हैं। एक और बड़ा पहलू संपत्ति का है। कई मामलों में देखा गया है कि बुजुर्गों की संपत्ति पर उनके दूर के रिश्तेदार या आसपास के लोग नजर रखते हैं और उनकी कमजोरी का फायदा उठाकर कब्जा करने की कोशिश करते हैं। कई बार बुजुर्गों को डराकर या बहलाकर उनकी जमीन या मकान अपने नाम लिखवा लिया जाता है। जब तक बुजुर्ग अपने पैरों पर खड़े होते हैं, तब तक वे विरोध कर पाते हैं, लेकिन उम्र बढ़ने के साथ वे थक जाते हैं। तब उन्हें मजबूत कानूनी सहारे की जरूरत पड़ती है। केवल नैतिक शिक्षा से यह काम नहीं चलेगा, कानून का डर जरूरी है।

हमारे समाज में हमेशा कहा गया है कि माता-पिता की सेवा करना संतान का धर्म है। यह बात सही है,

सामग्री के प्रसार पर रोक लगा दी है, जो बड़ी राहत है। वहीं, केंद्रीय नेतृत्व की ओर से पूरे मामले की केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) से जांच कराने की मांग की जा रही है।

मुख्यमंत्री ने कहा है कि वह किसी भी जांच के लिए तैयार हैं और सारे दस्तावेज देने को भी तैयार हैं। उन्होंने कहा कि जांच की मांग हो रही है, यह अच्छी बात है। हम जवाब देंगे। यह बयान बताता है कि सत्तापक्ष इस मामले का सामना करने को तैयार है।

इस सारे शोर में सबसे ज्यादा नुकसान कर्नाटक की जनता का हो रहा है। जो राज्य कभी बेंगलुरु की तकनीक और मैसूर की संस्कृति के लिए जाना जाता था, आज वह स्टिंग और दल-बदल के लिए चर्च में है। विधानसभा में विकास, बेरोजगारी और किसानों के मुद्दों पर चर्चा होनी चाहिए, लेकिन चर्चा इस बात की हो रही है कि किसका वीडियो किसके पास है।

यह लोकतंत्र के लिए सबसे खतरनाक स्थिति है। जब राजनीति कैमरे में कैद होने लगे, तो जनता का जबरा टूटने लगता है। लोग सोचने लगते हैं कि सभी एक जैसे हैं और फिर वे मतदान से भी दूर होने लगते हैं। यही वह स्थिति है, जिसका फायदा उठाकर कुछ लोग सत्ता हथियाना चाहते हैं।

कर्नाटक में स्टिंग की हवा फिर बह रही है। अपने ही अपनों को कठघरे में खड़ा कर रहे हैं और दो दर्जन से ज्यादा विधायकों के पाला बदलने का दावा किया जा रहा है। लेकिन इतिहास गवाह है कि कर्नाटक की जनता बहुत समझदार है। वह स्टिंग के आधार पर नहीं, बल्कि काम के आधार पर फैसला करती है। जो दल कैमरे की राजनीति से बाहर निकलकर जनता के मुद्दों पर आएगा, वही जीत की ओर बढ़ेगा। बाकी सब कैमरे के धुंधलके में खोकर रह जाएंगे।

( नईदुनिया संपादकीय डेस्क )

## लेकिन धर्म केवल कहने से नहीं निभता। आज के भागदौड़ भरे जीवन में, जहां पति-पत्नी दोनों नौकरी कर रहे हैं और बच्चों की अपनी व्यस्तताएं हैं, वहां केवल नैतिकता के भरोसे बुजुर्गों को नहीं छोड़ा जा सकता। कानून इसलिए जरूरी है, ताकि जानबूझकर अपने बुजुर्गों की उपेक्षा करने या उनकी संपत्ति हड़पने वालों को सजा मिले और देखभाल केंद्र जवाबदेह बनें।

एक अच्छे कानून में बुजुर्गों के साथ मारपीट, मानसिक प्रताड़ना और आर्थिक शोषण को गंभीर अपराध माना जाना चाहिए। हर जिले में उनकी शिकायतें सुनने के लिए अलग इकाई हो, जो तुरंत कार्रवाई करे। सभी वृद्धाश्रमों, दिवसीय देखभाल केंद्रों और घरेलू देखभाल सेवाएं देने वाली संस्थाओं का पंजीकरण अनिवार्य हो और उनकी नियमित जांच की जाए। बिस्तर पर पड़े बुजुर्गों और गंभीर बीमारियों से पीड़ित लोगों के लिए विशेष आंकड़ा संग्रह और स्वयंसेवकों का नेटवर्क बनाया जाए।

दुनिया अब बुजुर्गों को बोझ नहीं, बल्कि अनुभव का स्रोत मान रही है। इसे सिल्वर इकोनॉमी कहा जाता है, यानी पचास वर्ष से अधिक उम्र के लोगों की जरूरतों और अनुभवों पर आधारित अर्थव्यवस्था। बुजुर्गों के पास अनुभव है, समय है और कई बार आर्थिक क्षमता भी है। यदि उन्हें सही अवसर दिया जाए, तो वे समाज को बहुत कुछ दे सकते हैं। वे बच्चों के संस्कार दे सकते हैं और अपने अनुभव से युवाओं का मार्गदर्शन कर सकते हैं। लेकिन यह तभी संभव है, जब उन्हें सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन मिले।

आज अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग नियम हैं। कहीं देखभाल के लिए कानून है, तो कहीं नहीं। इससे पूरे देश में एक समान सुरक्षा नहीं मिल पा रही है। इसलिए अब समय आ गया है कि केंद्र सरकार इस विषय पर राष्ट्रीय कानून बनाए, जो पूरे देश में लागू हो और जिसमें केरलम जैसे राज्यों के अच्छे अनुभवों को शामिल किया जाए।

समाज की भी अपनी सोच बदलनी होगी। बुजुर्गों की देखभाल केवल सरकारी या कानून की जिम्मेदारी नहीं है। यह पूरे समाज की जिम्मेदारी है। मोहल्ले के लोग, आवासीय कल्याण समितियां और स्थानीय निकाय, सभी को इसमें भूमिका निभानी होगी।

कोई समाज कितना सभ्य है, इसका पैमाना इस बात से तय होता है कि वह अपने बुजुर्गों के साथ कैसा व्यवहार करता है। हम चांद पर जा रहे हैं, नई तकनीक बना रहे हैं, लेकिन यदि हमारे ही घर में बुजुर्ग अकेले और अपरिभक्त हैं, तो यह प्रगति धधुरी है।

बच्चों का बाहर जाना नहीं रुकेगा और रुकना भी नहीं चाहिए, लेकिन पीछे रह गए माता-पिता की देखभाल के लिए मजबूत व्यवस्था बनाना आज की सबसे बड़ी जरूरत है। यह व्यवस्था कानून के माध्यम से मजबूत होनी चाहिए और पूरे देश में समान सुरक्षा सुनिश्चित की जानी चाहिए। तभी हम कह सकेंगे कि हम एक संवेदनशील और जिम्मेदार समाज हैं।

( नईदुनिया संपादकीय डेस्क )

# अंतरराष्ट्रीय रणनीति का नया हथियार, नक्शा और नाम बदलना

है। यही तरीका अरुणाचल प्रदेश, तिब्बत और दक्षिण चीन सागर में भी अपनाया गया है। हाल ही में खबर आई कि भारत ने लद्दाख के अड्डाईस रणनीतिक और भौगोलिक स्थानों के नाम आधिकारिक तौर पर तय किए हैं। इनमें गोनारा और हॉट सिंघा जैसे संवेदनशील क्षेत्र भी शामिल हैं। भारत के इस कदम के पीछे सोच स्पष्ट है कि अपनी जमीन के स्थानों के नाम तय करना संप्रभुता का अधिकार है।

जब एक पड़ोसी देश भारत के फैसले पर आपत्ति जताता है, तो भारत भी जवाब देता है और अपने दस्तावेजों को अधिक सटीक करता है। यह केवल प्रशासनिक कार्रवाई नहीं, बल्कि एक कूटनीतिक संदेश है कि लद्दाख पर भारत का अधिकार अटूट है और किसी बाहरी ताकत की आपत्ति से वह बदलने वाला नहीं है।

आज की दुनिया में युद्ध कई स्तरों पर लड़ा जाता है। पहला जमीन पर, दूसरा मीडिया में और तीसरा नक्शे पर। नक्शे का युद्ध सबसे खतरनाक है, क्योंकि वह बिना गोली चलाए



जमीन पर कब्जे की कहानी गढ़ देता है।

विदेशी ताकतें यही कर रही हैं। वे हर साल नए मानचित्र जारी करती हैं और उनमें लद्दाख

के कुछ हिस्सों को अपने रंग में दिखाती हैं।

फिर इन मानचित्रों को संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों पर प्रस्तुत करती हैं, ताकि

भविष्य में बातचीत के दौरान वे कह सकें कि उनके पुराने मानचित्रों में यह क्षेत्र उनका था। यह एक दीर्घकालिक रणनीति है, जिसका लक्ष्य तत्काल कब्जा करना नहीं, बल्कि भविष्य के लिए दावा तैयार करना है।

लद्दाख की भौगोलिक स्थिति इसे अत्यंत महत्वपूर्ण बनाती है। यह वह क्षेत्र है, जहां भारत, चीन और पाकिस्तान की सीमाएं मिलती हैं। यह मध्य एशिया का प्रवेश द्वार है और यहां से पूरे हिमालय पर नजर रखी जा सकती है। साथ ही, लद्दाख में दुर्लभ खनिज, जल संसाधन और रणनीतिक दरें हैं, जो किसी भी बड़ी ताकत के लिए आकर्षक हैं। इसलिए विदेशी ताकतें चाहती हैं कि लद्दाख किसी न किसी बहाने अस्थिर रहे, ताकि वे वहां अपना प्रभाव बढ़ा सकें।

भारत को इस रणनीति का जवाब केवल विदेश मंत्रालय के बयानों तक सीमित नहीं रखना चाहिए। उसे तीन स्तरों पर काम करना होगा। सामरिक स्तर पर लद्दाख में सड़कों,

पुलों और हवाई पट्टियों का निर्माण तेजी से करना होगा, ताकि सेना हर मौसम में हर जगह पहुंच सके। नागरिक स्तर पर लद्दाख के गांवों को आबाद रखना होगा और वहां के लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य तथा रोजगार उपलब्ध कराना होगा। जब स्थानीय लोग मजबूत होंगे, तो कोई भी बाहरी ताकत वहां अपना नाम नहीं थोप पाएगी। कूटनीतिक स्तर पर भारत को दुनिया को बताता होगा कि कैसे विस्तारवादी सोच रखने वाला देश नक्शों के जरिए दूसरे देशों की संप्रभुता को चुनौती दे रहा है। भारत को अपने मित्र देशों के साथ मिलकर इस नक्शा युद्ध के खिलाफ आवाज उठानी होगी।

विदेशी ताकतें भूगोल बदलना चाहती हैं, लेकिन भारत को लोगों का भरोसा मजबूत करना है। लद्दाख के लोगों का भारत के साथ जुड़ाव देश की सबसे बड़ी ताकत है। कोई भी षड्यंत्र कितना भी बड़ा क्यों न हो, वह इस भरोसे को नहीं तोड़ सकता। भूगोल कागज पर बदलने की कोशिश की जा सकती है, लेकिन जमीन पर बना रिश्ता सदियों पुराना है और वही रिश्ता लद्दाख की असली सुरक्षा है।

( नईदुनिया संपादकीय डेस्क )